दसवाँ अध्याय
ऊदी का दिव्य प्रभाव

द्वारकामाई में सतत प्रज्वलित रहने वाली धूनी की विभूति (ऊदी) के सम्बन्ध में सहस्त्रो लोगों को विलक्षण अनुभव हो चुके है। एक पारसी सज्जन की छोटी लडकी अपस्मार (मिर्गी) के रोग से ग्रस्त हो गई थी। दिन में कई बार उसके हाथ-पैंर ऐठ जाते और वह मूर्च्छित हो जाती थी। उस पारसी सज्जन ने श्री बाबा की दी हुई ऊदी का प्रयोग किया और धीरे-धीरे लडकी रोग-मुक्त हो गई।

श्री साई महाराज की लीलाओं का जब हम सूक्ष्म अध्ययन करते है, तो हमारी बुद्धि कुंठित हो जाती है। हम चकित-भ्रमित रह जाते है। इसी तरह एक बार अमरावती के दादासाहेब खापर्डे कुटुंबसहित शिरडी में वास करने के लिए आए। उनके कुछ दिन तो श्री बाबा के सहवास में बड मजे से व्यतीत हुए। परंतु, एक दिन उनके लडके को ज्वर ने घेर लिया और देखते-देखते ही ज्वर ने प्लेग का उग्र रूप धारण कर लिया। दादासाहेब और उनकी पत्नी के पैरो के नीचे से धरती खिसक गई। सायंकाल का समय था। श्री बाबा नित्य क्रम के अनुसार धीरे-धीरे लेंडी बाग की ओर जा रहे थे। दादासाहेब की पत्नी श्री बाबा के पीछे पीछे दौडती हुई आई और श्री बाबा का मार्ग रोक कर

सिसकियाँ भरते हुए कम्पित स्वर से बोली,''बाबा, अब क्या करूँ? बच्चे को प्लेग हो गया।'' श्री बाबा क्षण भर के लिए उसकी ओर देखते हुए खडे रहे और फिर धीर गंभीर मुद्रा धारण कर शान्त भाव से आकाश की ओर दृष्टि लगा कर बोले-''सारा आकाश काले काले बादलों से घिरा हुआ है। परंतु थोडे ही समय के पश्चात् सारे बादल हट जाएँगे। आकाश पूर्ववत् निरभ्र हो जायगा।'' इतना कह कर श्री बाबा ने बाजार में ही इकट्ठे हुए लोंगो के समक्ष अपनी कफनी ऊपर उठाई। सभी लोंगो यह देख कर बडा आश्चर्य हुआ की श्री बाबा की कमर के ऊपरी भाग में अंडो के आकार की चार बडी बडी गुठलियाँ उभर आई हैं। उन गिलटियाँ की ओर देखते हुए और वहाँ उपस्थित लोगों को लक्ष्य करते हुए श्री बाबा पुन: बोले-''देखिये, भक्तों के हित के लिए मुझे कितना कष्ट उठाना पडता है। भक्तों का दु:ख मुझे सहना पडता है।'' खापर्डे के बच्चे का ज्वर तो हट गया और उसकी प्लेग की गुठलियाँ भी नष्ट हुई; परंतु, साथ ही साथ श्री बाबा के दिखाये हुए चमत्कारो के कारण अन्य लोगों के मन में उत्पन्न शंकाएँ भी नष्ट हो गई। सच्चे अर्थ में जो सत्पुरूष होते है, वे कभी भी अपने भक्तों को संकट में पडा नही देख सकते। वरन उसका संकट अपने ऊपर ले लेते है। सचमुच ही संत का हृदय मोम से भी नरम तथा मक्खन से भी कोमल होता है। सत्पुरूष अपने भक्तों से किसी भी प्रकार की अपेक्षा न रखते हुए केवल निरपेक्ष शुद्ध भावना के साथ ही उनपर पुत्रवत् प्रेम की वर्षा करते है।

जब एक बार किसी भक्त को श्री बाबा अपनाते थे, तो उस की भलाई के लिए सतत प्रयत्नशील रहते थे और इसके लिए स्वयं परमेश्वर की आराधना करते थे।

नारायण गाँव के भीमाजी पाटील को नानासाहेब चाँदोरकर ने श्री बाबा से परिचित करवाया था। भीमाजी एक धनी-मानी व्यक्ति थे। जीवन में

जब वह क्षय रोग से पीडित हुए और उनका उठना-बैठना भी भारी हो गया, तो भीमाजी ने ईश्वर को पुकारा। उन्होंने नानासाहेब को पत्र लिखकर अपनी दुर्दशा की कहानी सुनाई और पूछा कि,''अब क्या उपाय करना चाहिये?'' नानासाहेब चाँदोरकर ने तुरंत ही लिखकर भेजा की,''श्री सद्गुरू साई बाबा के चरण कमलों में शरण लो, तुम्हें बचाने के लिये वही एक समर्थ सद्गुरू है।'' पत्रका उत्तर मिलते ही भीमाजी शिरडी रवाना हुए।

श्री साई बाबा जब द्वारकामाई में बैठे हुए थे, तो भीमाजी पाटील को लगभग मृतावस्था में ही उनके समक्ष लाकर रखा गया। भीमाजी को देखते ही श्री बाबा के मुँह से यह उद्गार निकले,''यह तो अपने पूर्व जन्म के कर्मो का फल ही भोग रहा है। मैं कुछ भी नही कर सकता।''और वह उठकर जाने लगे। उसी समय निराश हो भीमाजी ने आर्त स्वर से बाबा को पुकारा और अनन्य भाव से उनकी शरण मे जाकर उनके चरण पकड लिये। कुछ क्षणों के लिए कठोर बना हुआ श्री बाबा का हृदय द्रवित हो उठा और शान्त भाव से भीमाजी को आशीर्वाद देते हुए वे बोले-''अच्छा, चिंता न करो। यही रहो। मुझे तुम्हें रोग-मुक्त करना ही होगा। जब इस द्वारकामाई में एक बार कोई भक्त पैर रखता है तो उसके दु:खो का अंत होना ही चाहिये। ईश्वर बडा दयालु है। मन में पूर्ण विश्वास रखो, वह तुम पर अवश्य कृपा-दृष्टि करेगा।''

श्री बाबा के केवल आशीर्वाद से भीमाजी का रोग नष्ट होता चला गया। रक्त की उलटियाँ बंद हो गई और वह स्फूर्ति भी अनुभव करने लगा। भीमा बाई के घर पर भीमाजी के रहने की व्यवस्था कर श्री बाबा स्वयं अपनी दैवी शक्ति के बल पर प्रयोग करने लगे। रात्रि में भीमाजी को नियमपूर्वक स्वप्न आते थे। एक बार स्वप्न मे हाथ में छडी लिए एक मास्टरजी दिखाई दिये और उन्होनें छडी से भीमाजी की खासी ताडना की। फिर कुछ दिनों के बाद भीमाजी ने एक और स्वप्न मे किसी अज्ञात व्यक्ति को एक बहुत बडे पत्थर से अपनी छाती पर प्रहार करते हुए देखा। स्वप्न में भीमाजी को

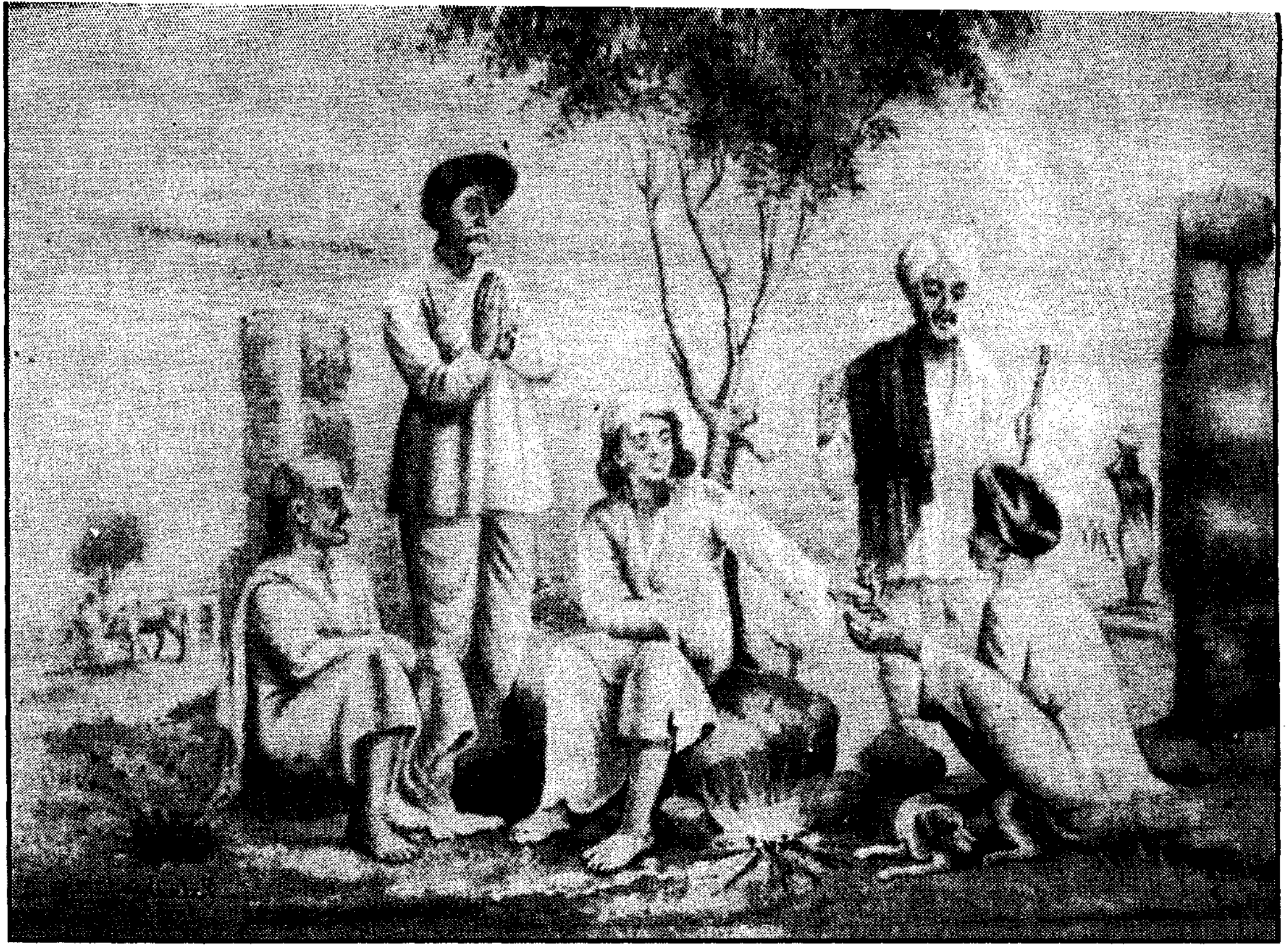

शिरडी में नीम–वृक्ष के नीचे ग्रासीन सोलह वर्षीय तरुण श्री साई नाथ महाराज

भयंकर मार पडती थी और वेदना तो असहनीय हो जाया करती थी; परंतु जागृतावस्था में भीमाजी यह अनुभव करते थे कि उनका रोग धीरे-धीरे नष्ट होता जा रहा है। कुछ महीनों के पश्चात भीमाजी पूर्णत: रोग-मुक्त हुए। यही भीमाजी स्वस्थ होने पर श्री बाबा के अनन्य भक्त बने। उन्होंने सत्यनारायण की पूजा की भांति प्रति वर्ष नियम से ''श्री सत्यसाई व्रत-पुजा'' करने की परिपाटी आरम्भ की।

श्री सद्‌गुरू साईनाथ में ऐसा विलक्षण सामर्थ्य था कि किसी औषधि या ऊदी के प्रयोग के बिना केवल हस्त-स्पर्श के भी कभी-कभी भक्त का असाध्य रोग चुटकियों में नष्ट कर देते थे। हरदा के दत्तोपंत नामक एक सज्जन चौदह वर्षोसें उदर पीडा से दु:खी थे। नाना प्रकार के उपाय और मंत्र-तंत्र आदि करते करते वे थक गये थे। अंत में एक मित्र के मुख से श्री साई बाबा की लीलाओं का वर्णन सुन दत्तोपंत श्री बाबा के दर्शनार्थ शिरडी गये और अनन्य भाव से श्री बाबा के चरणो में अपना मस्तक झुका दिया। श्री बाबा ने दत्तोपंत की ओर एक ही बार कृपा-दृष्टि से देखा। अत्यन्त प्रेम से उनके उदर पर हाथ फेर कर मुक्त कंठ से दत्तोपंत का रोग दूर होता गया और जिस रोग ने लगातार चौदह वर्षो तक उनके जीवन को नरक बना रखा था, वह असाध्य रोग पूर्णत: नष्ट हो गया।

साधु-संत मनुष्य की देह को तोते के पिंजडे की उपमा देते है। तोता पिंजडे को ही अपना सर्वस्व समझता है और उसी में आनन्द से विहार करता है। उसी प्रकार मनुष्य की आत्मा शरीररूपी मायाजाल से निर्मित पिंजडे में स्वयं को उलझा लेती है और सुख-समाधान के भ्रम में अपने सच्चे स्वरूप को भूल जाती है। ऐसी स्थिती में किसी योग्य गुरूसे भेंट हो जाती है तो वही उचित मार्गदर्शन करता है और मनुष्य की सद्‌गति होती है। श्री साईनाथ सच्चे सद्‌गुरू थे। उनके दर्शनमात्र से अनेक जीवों को सत्य का मार्ग दिखाई दिया और समय आने पर उन्होनें सद्‌गति प्राप्त की। श्री बाबा के कुछ लोगों

को भक्ति-मार्ग का उपदेश देकर परमोच्च अवस्था में पहूँचाया।

श्री साई नाथ महाराज ने किसी को भी मंत्र नही दिया, यद्यपि वे स्वयं मंत्र-विद्या में पूर्णत: पारंगत थे। वृश्चिक के काटने पर मंत्र द्वारा विष प्रभाव दूर करने के उनके अनेक उदाहरण बतलाए जा सकते है। इसी प्रकार सर्प दंश के पश्चात केवल 'चले जाओ' शब्दों का उच्चारण कर अपने परम भक्त शामा (माधवराव) को विष-प्रभाव सेबचा लिया। शामा को एक बार विषैले सर्प ने काट लिया और शीघ्र ही विष सारे शरीर में फैल गया। गाँवों में प्रचलित पद्धति के अनुसार पंचाक्षरी (मांत्रिक) बुलाये गये और उन्होनें शामा को उठा कर 'विरोबा' के मंदिर में ले जाने का निश्चय किया। परंतु शामा का श्री बाबा में पूर्ण विश्वास था। इसलिए उन्होंने उस मंदिर में जाना अस्वीकार कर दिया और दौडते हुए द्वारकामाई मे जाकर श्री बाबा के चरणों में शरण ली। उन्हें उस लडखडाती अवस्था में देखकर श्री बाबा ने अंतर्ज्ञान से सब कुछ जान लिया और एकाएक क्रोधित हो गालियों की बौछार करने लगे। ''ओ ब्राम्हण के बच्चे, जाता है कि नही? खबरदार, ऊपर चढ के आया तो ! नीचे ऊतर, चले जाओ।'' इस प्रकार के क्रोध में कहे हुए शब्द सुन कर शामा (माधवराव) को बडा दु:ख हुआ। ''श्री बाबा की द्वारकामाई अपना ही घर है। श्री बाबा के चरण तो अपना आश्रय-स्थान है। दयालु बाबा अपने चरण-कमलो से कभी भी किसी को दूर नही हटायेंगे''- यह भावना मन में रख कर ही तो शामा (माधवराव) बडी आशा से दौडकर आये थे; किंतु श्री बाबा को क्रोधावस्था में देख वे दुविधा में पड गये और श्री साई नाम का जप करते हुए वही पडे रहे। थोडी देर बार बाबा का कोप शांत हुआ। शामा की पीठ पर प्रेम से हाथ फेरतेहुए वे बोले, ''बेटा, घबराओ नहीं। कोई चिंता न करो। दयालु परमेश्वर तुम्हारी रक्षा करेगा।'' तदनंतर श्री साई को वापस घर जाने की अनुमति दे दी। शामा के जाने के बाद श्री बाबा ने तात्या पाटील और दीक्षित को बुला कर कहा, ''तुरंत ही शामा के घर जाओ। उसे अपनी इच्छानुसार कुछ भी खाने

दो, घर में कही भी टहलने दो, एक बात का पूरा-पूरा ध्यान रखने के लिये कहो और वह यह है कि आज रात को वह जमीन पर सीधे लेट कर बिल्कुल न सोये।'' शामा ने श्री बाबा की आज्ञा का अक्षरश: पालन किया और फलस्वरूप सर्प-दंश के विष का उन पर जरा भी असर न हुआ। अब यहां एक बात विशेषत: ध्यान में रखनी चाहिये, और वह यह है कि श्री बाबा का उद्गार सुन शामा को भ्रम हो गया था। श्री बाबा ने क्रोध में जो शब्द कहे थे, वे शामा को लक्ष्य करं नही कहे गये थे। वे शब्द तो सर्प का विष दूर करने के लिए ही कहे गये 'पंचाक्षरी' मंत्र के समान थे। ऐसे कार्य के लिए अन्य मांत्रिको की भाँति श्री बाबा चावल, नींबू धूप आदि वस्तुओं की आवश्यकता अनुभव नही करते थे।

श्री बाबा भक्तगणों से अधिकारपूर्वक दक्षिणा माँगा करते थे और उसका व्यय सदैव उचित कार्यो के लिए ही किया करते थे। नित्य ईंधन इकट्ठा कर वे अखण्ड जलने वाली पवित्र धुनी प्रज्वलीत रखा करते थे। लकडी जलने के बाद श्री बाबा बची हुई रक्षा, जिसे ऊदी कहते थे, सभी भक्तों को विदा होने के समय प्रसाद के रूप में बाँटा करते थे। श्री बाबा के इस विचित्र आचरण में अत्यन्त गहन अर्थ भरा हुआ था। इस पृथ्वी की सभी चराचर वस्तएँ नश्वर है, राख है। अपनी अत्यन्त प्रिय यह हाडमांस की देह भी अंत में राख में ही रूपान्तरित होती है। हमें आज दिखाई देने वाली हमारी भव्य देह, हमारा सौंदर्य, हमारी बहुमूल्य संपत्ति, इतना ही नही, हमें अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय दिखने वाले हमारे स्वजन-सम्बन्धी आदि सब भविष्य में नष्ट हो जायेंगे और अंत में सब की राख ही हो जायेगी। इसलिये इन नश्वर वस्तुओं मे अत्याधिक आसक्ति रखकर हम कितनी मूर्खता कर रहे है, प्रत्येक भक्त के हृदय में इसकी सदैव कल्पना जागृत रखने के लिए ही श्री बाबा भक्त के हाथों में प्रसाद के रूप में ऊदी दिया करते थे। इस जग में शाश्वत, चिरंजीवी केवल ब्रम्हा ही है और मनुष्य-जन्म में यदि हम गुरू-कृपा से उस ब्रम्ह-ज्ञान से

परिचित न हुए तो हमारा जन्म व्यर्थ ही जायगा। पुन: पुन: जन्म लेकर इस जन्म मरण के चक्कर में हमारी जीवात्मा सुख-दु:ख भोगते हुए अनन्त काल तक फँसी रहेगी। हम अकेले हैं। प्रत्येक मनुष्य अपने प्रारब्ध भोग के अनुसार अकेला ही जन्म लेता है और अकेला ही मृत्यू पाता है। अपने धर्म का यह महान तत्त्व मानो श्री बाबा के ऊदी-प्रसाद में गुंथित हुआ था। इसीलिये ही उस समय श्री बाबा की ऊदी का महत्त्व लोगों ने स्वीकार किया था; परंतु वर्तमान समय में भी श्री बाबा के हस्तस्पर्श से पुनीत हुई धूनी की ऊदी भक्तों के लिए एक अत्यन्त मूल्यवान निधि है।

इस ऊदी ने हजारों भक्तो की मानसिक तथा शारीरिक व्यथाओं को दूर करने का अद्‌भुत चमत्कार कर दिखाया है। इस चराचर जगत की सब सत्य तथा असत्य वस्तुओं की यथातथ्य स्थिति को भक्तों के मन में बैठाने के लिए ही श्री बाबा ने ऊदी बाँटने तथा दक्षिणा माँगने का मार्ग अपनाया था। शरीर नश्वर है। उसमें मोंह रखना सर्वथा अनुचित है, यह तत्त्व उन्होंने ऊदी के द्वारा लोगों के समक्ष रखा तो दुसरी ओर भक्तों से दक्षिणा माँगने की अपनी प्रथा से त्याग की भावना को भी विकसित किया।

श्री बाबा श्रद्धालु भक्त के मस्तक पर अपने हाथ से ही ऊदी लगाते थे और मुक्त हस्त से ऊदी को भंडार लुटने की अनुमति भी देते थे। उस अवसर पर भक्तों के हृदयों में अपरिमित आनन्द की लहरे उठती थी। स्वयं री बाबा भी ऐसे क्षणों में स्वर्गीय आनन्द में रमण करते हुए प्रतीत होते थे। आनन्दोल्लास से उनका हृदय ओत-प्रोत हो जाता था और प्रेमानंद में रत हो वे अपने अति शुद्ध सुरीले एवं मधुर कण्ठ से एक गीत गाया करते थे, जिसके बोल थे-''रमते राम आओजी आओजी। ऊदिया की गोनिया लाओ जी।'' यह भक्ति रस से ओत प्रोत गीत स्वयं श्री बाबा के मुख से जिन भक्तों ने सुना है, वे सचमुच ही परम भाग्यशाली है।

पवित्र नासिक क्षेंत्र में नारायण मोतीराम जानी नाम के एक सज्जन श्री साई महाराज के परम भक्त रामचंद्र मोडक के पास नौकरी करते थे। एक दिन अनायास ही नारायणराव को श्री बाबा के दर्शनार्थ जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। दर्शन करते समय नारायणराव की माता ने श्री बाबा से अपने पुत्र पर कृपा-दृष्टि रखने की प्रार्थना की। श्री बाबा ने नारायणराव को आशीर्वाद देते हुए कहा, ''अब इस के उपरान्त किसी की सेवा- चाकरी न करो। अपना ही कोई स्वतंत्र व्यवसाय आरम्भ करो।'' उसी क्षण नारायणराव ने अपनी नोकरी से त्याग-पत्र दे दिया और नासिक मे 'आनंदाश्रम' की स्थापना कर शीघ्र ही अपने व्यापार में पर्याप्त उन्नति की।

कुछ दिनों के बाद नारायणराव के इसी 'आनंदाश्रम' में उन का एक चिर-परिचित मित्र थोडे दिन रहने के उद्देश्य से आया। एक दिन एकाएक उसे वृश्चिक ने काट लिया। वृश्चिक के काटने से होने वाली वेदना दूर करने का सामर्थ्य श्री बाबा के ऊदी में है, यह नारायणराव भली-भाँति जानते थे। अतएव वे तुरंत ही ऊदी ढूँढने लगे। पंरतु शिरडी से जो ऊदी वे लाये थे, वह समाप्त हो चुकी थी। इधर उनका मित्र असह्य वेदना से तडप रहा था। आखिर नारायणरावने श्री बाबा का चित्र सम्मुख रख वहाँ एक सुगन्धित अगरबत्ती जलाई और श्री बाबा के नाम का जप करना आरम्भ कर दिया। नियत समय पर जप पूरा होने के पश्चात चिक्षके सामने पडी हुई अगरबत्ती की राख में से एक चुटकी भर राख उठाकर नारायणराव ने उसे ही श्री बाबा की ऊदी मानकर मित्र के उसी अंग पर लेप कर दिया, जहाँ वृश्चिक ने काटा था। मित्र की वेदना तुरन्त बंद हो गई और वृश्चिक का विष उतर गया। नारायणराव का मित्र पूर्ववत् स्वस्थ चित्त हो गया। नारायणराव बहुत प्रसन्न हुए और श्री बाबा में उनकी भक्ति और भी दृढ हो गई।

श्री बाबा द्वारा अपने हाथों से दी हुई ऊदी का जितना गुणकारी प्रभाव होता था, उतनी ही उनके श्रद्धालु भक्तों द्वारा उनके नाम पर दी हुई भस्म भी

अचूक फलदायी सिद्ध होती थी। नानासाहेब चाँदोरकर एक बार अपनी पत्नी सहित कल्याण जा रहे थे। मार्ग मे ठाणा स्टेशन पर बांद्रा में रहने वाला उनका एक मित्र उन्हे मिला और बडी घबडाहट में उसने सूचित किया कि उसकी लडकी को प्लेग हो गया। नानासाहेब के पास उस समय श्री बाबा की ऊदी नही थी। परंतु भक्ति और श्रद्धा से श्री बाबा का नाम स्मरण कर उन्होंने अपने पैर तले की एक चुटकी भर मिट्टी लेकर अपने मित्र को दे दी ओर उस श्री साई महाराज के चरणों मे लीन होने का आदेश दिया। नानासाहेब के मित्र ने घर जाकर प्लेग की गुठलियों पर ऊदी का लेप दिया। उसी क्षण से लडकी का ज्वर दूर होना आरम्भ हो गया और प्लेग जैसे असाध्य रोग से लडकी शीघ्र ही रोग मुक्त हो गई। श्री बाबा का केवल नाम स्मरण कर उठाई हुई रज ने भी कितना अद्‌भुत चमत्कार कर दिखाया।

नानासाहेब चाँदोरकर ने री बाबा का नाम लेकर ऊदी के बदले मिट्टी देकर जिस साहस का परिचय दिया, उसका एकमेव कारण था श्री बाबा में उनका अटूट विश्वास तथा अविचल श्रद्धा। जब वे स्वयं जामनेर मे तहसीलदार का पद सुशोभित कर रहे थे तो एक बार श्री बाबा की ऊदी का उन्हें भी विलक्षण अनुभव हुआ था। खानदेश जिले के जामनेर जैसे एक साधारण तथा सर्वथा अपरिचित गाँव में जब वे कार्यवश निवास कर रहे थे तो उन्हें एक बार अति बिकट परिस्थिती का सामना करना पडा था। उनकी लाडली बेटी मैनाताई प्रसव के लिए जामनेर आई हुई थी। दिन पूरे होते ही एकाएक उसकी अवस्था गम्भीर हुई। लगातार तीन दिन प्रसव वेदना जारी रही। स्थिति में सुधार होने की कोई संभावना दिखाई न दी ओर सभी लोग चिंता में डूब गये। नानासाहेब तथा उनकी पत्नी ने श्री बाबा का नाम-स्मरण आरम्भ किया। ठीक इसी समय शिरडी में बैठे-बैठे श्री बाबा ने अंतर्ज्ञान से जान लिया कि उनका भक्त संकट में है। उन्होने खानदेश मे अपने गाँव जाने के लिए उद्यत एक साधु रामगीर बुवा को बुलवाया और उसे आज्ञा दी कि गाँव जाते समय मार्ग मे

जामनेर में थोडी देर ठहर कर नानासाहेब चाँदोरकर के पास ऊदी और आरती पहुँचा दे। रामगीर बुवा ने नम्रता से उत्तर दिया कि उसके पास केवल दो ही रूपये बाकी है, जो जलगाँव तक ही रेल का किराया चुकाने के लिए पर्याप्त है। इस पर श्री बाबा के यह कहने पर कि वह कोई चिंता न करे, उसकी सारी व्यवस्था हो जायेगी, रामगीर बुवा नि:संदेह मन से श्री बाबा की आज्ञानुसार दोनों वस्तुएँ लेकर चल पडे। जलगाँव स्टेशन पर वे रात को लगभग तीन बजे उतरें। उस समय उनके पास केवल दो आने ही बचे थे। चिंता में व्याप्त हो रामगीर बुवा यह सोच ही रहे थे कि आगे क्या करना चाहिएँ कि तभी एक अपरिचित व्यक्ति ने आकर प्रश्न किया-''शिरडी का रामगीर बुवा कौन है?'' रामगीर बुवा को जब ज्ञात हुआ कि नानासाहेब ने ही उस व्यक्ति को ताँगा साथ लेकर भेजा है, तो वे उसके साथ ताँगे में बैठ जामनेर की ओर चल दिए। ताँगा द्रुतगति से चल पडा और प्रात:काल के समय एक स्थान पर विश्राम के लिए रूक गया। ताँगे वाला घोडों को पानी पिलाने ले गया और स्टेशन पर रामगीर बुवा को लेने आये हुए व्यक्ति ने रामगीर बुवा से थोडा जल-पान करने का आग्रह किया। उस मनुष्य की दाढी मूँछे तथा वेश-भुषा देख कर रामगीर बुवा के मन में यह कोई मुसलमान है। अत: उन्होंने जल-पान करने मे असमर्थता प्रकट कर दी। परंतु जब ऊस व्यक्तिने यह बतलाया कि वह गढवाल का क्षत्रिय वंशीय हिंदू है, तथा जलपान की सारी सामग्री स्वयं नानासाहेब ने विशेषरूप से उनके लिये ही भेजी है। तब रामगीर बुवा का पूर्ण समाधान हुआ और दोनों ने मिल कर यथेच्छ जल-पान किया। पुन: ताँगे में बैठ वे आगे रवाना हूए और प्रात:काल जामनेर पहुँचे। गाँव की सीमा के निकट पहूँचने पर रामगीर बुवा लघुशंका से निवृत होने के लिए थोडी देर के लिए ताँगे में से उतरे। वापस आकर देखा तो वह मनुष्य और ताँगा दोनो ही अदृश्य हो चुके थे। इस घटना से रामगीर बुवा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अकेले ही समीप एक कचहरी में प्रवेश कर उन्होनें नानासाहेब के संबंध

में पूछताछ की और पूछते-पूछते उनके घर पहूँच गये। रामगीर बुवा ने नानासाहेब को बतलाया कि श्री बाबा की आज्ञा से वे शिरडी से जामनेर आये है। श्री बाबा की दी हुई ऊदी तथा आरती का कागज उन्होंने नानासाहेब को सौंप दिया। उस समय नानासाहेब की लडकी मैनाताई बहुत गंभीर तथा संकटपूर्ण अवस्था में थी, मानो अंतिम साँसे ले रही हो। घर के सभी लोग नितांत निराश हो बैठ थे। नानासाहेब ने पत्नी को बुला कर श्री बाबा की भेजी हुई ऊदी उसके सुपुर्द कर दी। लडकी के कमरे मे प्रवेश कर नानासाहेब की पत्नी ने ऊदी पानी मे घोल कर उसे पिला दी और वह स्वयं श्री बाबा की भेजी हुई आरती गाने लगी। श्री बाबा की ऊदी ने अद्‌भुत चमत्कार दिखाया। कुछ ही देर बाद मैनाताई कुशलतापूर्वक प्रसव पीडा से मुक्त हो गई और एक सुंदर कोमल बालक के रोने की आवाज सभी ने उपस्थित लोंगों के कानों में गूँज उठी। सब की प्रसन्नता का पारावार न रहा। सभी ने अत्यन्त प्रेम एवं श्रद्धा से श्री बाबा के चरणों मे अपने मस्तक नत किये। रामगीर बुवा ने धन्यवाद देते हुए नानासाहेब से कहा कि उन्होनें ठीक समय पर अपना आदमी और ताँगा भेज दिया था, इसलिये वे ठीक समय पर उपस्थित हो सके। परंतु, रामगीर बुवा के ये शब्द सुनकर तो नानासाहेब अचम्भे में पड गए, क्योंकि ये बातें उनक ध्यान में ही नही आई थी। अपनी पुत्र के लिए वे इतने अधिक चिंताग्रस्त थे की यह सब कुछ करना उनके लिए बिल्कुल असम्भव था और वैसे भी नानासाहेब ने किसी भी व्यक्ति को ताँगे के साथ स्टेशन नहीं भेजा था, क्योंकि रामगीर बुवा के जामनेर आने की कोई पूर्व सुचना तो उन्हें थी नही। तदनंतर सभी उपस्थित लोंगो ने उस गढवाली क्षत्रिय मनुष्य तथा उसके ताँगे की पर्याप्त खोज की। परंतु उसक कही भी पता न लग सका। वास्तव में प्रत्यक्ष श्री साई महाराज ही अपने भक्त के संकट निवारणार्थ वहाँ प्रकट हुए थे। श्री बाबा की लीलाएँ ऐसी ही विस्मयकारी होती थी। इस घटना से नानासाहेब का श्री बाबा में विश्वास और भी दृढ हो गया। इसमे आश्चर्य की कोई बात ही नही।

नास्तिक मनुष्य सहज ही में इन बातों में विश्वास नही रखते। अपनी अपनी कल्पनाओं के अनुसार वे नाना प्रकार करते रहते है और अंत मे काकतालीय न्याय पद्धति से इन सब बातों का होना सम्भव है, इस प्रकार मन का समाधान कर चुप्पी साध लेते है। ऐसे दुराग्रही लोगों को भी श्री बाबा की लीलाएँ देखकर हाथ मलकर बैठना पडा और अंत मे उन्हें श्री बाबा की शरण में जाना ही पडा। सामान्य मनुष्य, चाहे वह अपने व्यवसाय में कितना भी कार्यतत्पर और निपूण हो, प्रत्यक्ष अनुभव तथा अभ्यास के बिना साधुओं की लीलाओं का अर्थ नही समझ सकता। मालेगाँव के एक सुप्रसिद्ध डॉक्टर की सत्य-कथा सुनकर इस विचारधारा की प ुष्टि होती है। इन डॉक्टर साहब का एक तरूण भतीजा हड्डी के क्षय-रोग से ग्रस्त हुआ। स्वयं डॉक्टर साहब ने निजी प्रयत्नों से उसे स्वस्थ करने मे कोई कसर न उठा रखी।

अन्य प्रसिद्ध सर्जनों से विचार-विमर्श किया गया। अंतिम उपाय के रूप में उस लडके पर शल्य क्रिया भी की गई। पंरतु, रूपये में एक आना भर भी लाभ न हुआ। अंतत: कुछ समझदार लोगों ने लडके के माता-पिता को किसी दैवी उपाय का आश्रय लेने का परामर्श दिया और इस अभिप्राय से ही श्री साई महाराज का उल्लेख किया। लडके माता-पिता ने तुरंत ही शिरडी के लिए प्रस्थान किया और श्री बाबा के चरणों में लडके को डाल कर उसे जीव-दान देने के लिए उनसे अनन्य भाव से प्रार्थना की। मुस्कुराते हुए लडके की ओर देखकर श्री बाबा बोले, ''इस द्वारकामाई का जिसने सहारा लिया, उसे कभी भी कोई दु:ख सहन नही करना पडेगा। आप यत्किंचित चिंता न करे। ईश्वर में पूर्ण भरोसा रखो और मेरी धूनी की ऊदी का रोग ग्रस्त स्थान पर सतत लेप करते रहो। एक सप्ताह में लडका रोग-मुक्त हो जायेगा।'' लडके के संबंधियो ने श्री बाबा का बताया हुआ उपचार करने का दृढ निश्चय किया। श्री बाबा ने लडके को अपने पास बैठाया। उस के शरीर के रोग-ग्रस्त भाग पर प्रेम से धीरे-धीरे हाथ फेर कर और एक क्षण के लिए एकाग्रचित्त से उसकी

और देखते हुए श्री बाबा पुन: बोले-''यह मस्जिद नही, वरन् प्रत्यक्ष भगवान श्रीकृष्ण की द्वारावती है। यहाँ आने से सब दु:ख तथा पापो का नाश होना ही चाहिये।'' श्री बाबा के मुख से इतने आत्मविश्वास के साथ निकले हुए बोल असत्य कैसे सिद्ध हो सकते है? वह लडका केवल आठ दिनों मे पूर्णत: रोग-मुक्त हुआ और श्री बाबा से ऊदी प्रसाद प्राप्त कर सब लोग हर्ष-विभोर हो अपने गाँव लौट गये। लडके को बिल्कुल स्वस्थ देख उसके चाचा को, जो स्वयं डॉक्टर थे, बडा आश्चर्य हुआ और उन्होने इसे एक चमत्कार ही समझा।

कुछ दिनों पश्चात डॉक्टर साहब निजी व्यवसाय के कारण बम्बई जाने के लिए निकले। उन्होने मार्ग में शिरडी में उतर कर श्री बाबा के दर्शन करने का भी मन-ही-मन निश्चय किया। परंतु मालेगाँव से मनमाड के मध्य मिले हुए उनके कुछ मित्रों ने श्री बाबा के विषय में कुछ असत्य तथा मनगढन्त कहानियाँ सुनाकर उन का मन कलुषित कर दिया। अब शिरडी जाने का संकल्प त्याग कर डॉक्टर साहब सीधे बंबई पहूँचे। वहाँ लगातार तीन रात सपनो में डॉक्टर साहब के कानों में कोई मनुष्य चिल्ला कर ''अब भी तुम्हारा मुझमें विश्वास नही?'' ये शब्द स्पष्टत: उच्चार करता रहा। स्वप्न में मिली हुई इस शिक्षा के बल पर डॉक्टर साहब ने शिरडी जाने का पुन: दृढ निश्चय किया। उस समय उनके पास उपचार के लिए आये हुए एक रोगी की अवस्था गम्भीर थी। उसका ज्वर लगातार बढता ही जा रहा था।''मेरे रोगी का ज्वर यदि तुरंत ही दूर हुआ तो एक क्षण के लिए भी विलम्ब न कर शिरडी पहुँचूँगा'' इस प्रकार मन में निश्चय कर नित्य की भाँति डॉक्टर साहब रोगी को देखने के उद्देश्य से चल पडे। आश्चर्य यह हुआ कि उन दिन रोगी को ज्वर नही आया। डॉक्टर साहब का पूर्ण समाधान हुआ। श्री बाबा कोई सामान्य व्यक्ति न होकर परमोच्च कोटि पर पहूँची हूई एक असामान्य विभूति है, यद दृढ भावना डॉक्टर साहब के मन में उत्पन्न हुई और उन्होने शिरडी पहूँचते ही नम्रता से श्री बाबा के चरणों में आत्मसमर्पण कर दिया। वहाँ भी श्री बाबा ने कुछ और

लीलाएँ दिखाकर, द्वारकामाई की ऊदी में कितना प्रचण्ड सामर्थ्य भरा हुआ है, यह प्रमाणों सहित सिद्ध कर दिखाया। डॉक्टर साहेब तद्नंतर श्री बाबा की सेवामें तल्लीन हुए बहुत दिन शिरडी में रहे और ऊदी प्रसाद प्राप्त कर वापिस गाँव पहूँचे। मालेगाँव पहूँचते ही उन्हें बीजापूर में एक उच्च पद पर नियुक्त होने की सूचना मिली। भतीजे का राग-ग्रस्त होना एक निमित्त मात्र हुआ और डॉक्टर साहब को एक परमोच्च कोटि में पहूँचे हुए सिद्ध पुरूष के साथ सहवास का दुर्लभ अवसर मिला। यह सचमुच पूर्व जन्म का पुण्यों का फल ही समझना चाहिए।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋